तित्थयर ISBN-2277-7865

वर्ष – 48 अंक - चार जनवरी 2023

JAIN BHAWAN
CALCUTTA

Editorial Board –

Dr.Narendra Parson

Dr.Sulekh Jain

Dr. Jitendra B. Shah

Prof.G .C.Tripathi

Shri Pradip Nahata (co-ordinator)

TITTHAYAR is accessible at our Website –
www.jainbhawan.in

For articles , reviews and correspondence kindly contact –

Dr.Lata Bothra

Chief Editor

Mobile no-9831077309,

E mail – latabothra13@yahoo.com ,
latabothra@gmail.com

संपादन

डा.किरन सिपानी

JAIN BHAWAN
CALCUTTA

We are thankful for the financial assistance given towards the online publication of our Journals from a well-wisher at California , U.S.A. .

अनुक्रमणिका

1) **बच्चों के लालन-पालन में जैन दृष्टि** - डॉ. श्वेता जैन
2) **विश्व शांति और अहिंसा** - डॉ. वसुमति डागा

आवरण पृष्ठ – सरस्वती प्रतिमा , फतेहपुर सीकरी , उत्तरप्रदेश

विश्व शांति और अहिंसा

- डॉ. वसुमति डागा

विश्व शांति और अहिंसा पर विमर्श और विश्लेषण वर्तमान समय की आवश्यकता है। आज सम्पूर्ण विश्व आतंक के त्रास को झेल रहा है। दमन-दोहन ओर हिंसा के भाव आज` समय की पहचान बन रहे हैं। आतंकवाद, सम्प्रदायवाद और वर्णवाद के स्वर उग्र रूप लेते जा रहे हैं। विध्वंसक अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण की होड़-सी लगी हुई है। पिछली शताब्दियों में जो युद्ध लड़े गये, वे मानवशक्ति और रणनीति पर बल पर लड़े और जीते गये। परंतु प्रथम विश्वयुद्ध में टैंक, विषैली गैसें आदि अस्तित्व में आयी, बाद में प्रक्षेपास्त्रों के रूप में राकेट और राडार को भी युद्ध का साधन बनाया गया तथा आगे चलकर परमाणु बम का निर्माण हुआ। सन् 45 में हिरोशिमा और नागासाकी पर हुए बम-विस्फोट ने समूची मनुष्य जाति को भयाक्रांत कर दिया। यद्यपि बाद में वैज्ञानिकों के एक समुदाय ने परमाणु हथियारों पर पाबंदी लगाने पर जोर दिया, अनेक वैज्ञानिक संगठन लगातार परमाणु हथियारों के खिलाफ आवाजें उठाते रहे। दुनिया के विवेकशील प्रबुद्धजनों ने भी बलपूर्वक आवाज उठाई। वैश्विक स्तर पर शांति बनी रहे, इसके लिए संयुक्त राष्ट्र महासंघ की स्थापना भी की गई। लेकिन प्रश्न है कि क्या हिंसा का ताण्डव समाप्त हुआ? विश्व में जहाँ-तहाँ आतंकवादियों ने अपनी बर्बरता दिखाई है, वहाँ-वहाँ दिल दहला

देने वाली स्थितियां कुछ इस प्रकार की रही हैं -

बस्तियों की शक्ल काली हो गई है,
अमन की दुकान खाली हो गई है
एक सन्नाटा घरों को लूटता है
हर गली जैसी दुनाली हो गई है।।

इसके अलावा भी आज हिंसा अनेक रूपों में जन-जीवन में व्याप्त है। हिंसा जीवनशैली का हिस्सा बनती जा रही है। भौतिक सुखों की अंधी दौड़ में विश्व पर्यावरण असंतुलित हो रहा है। मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए नाना प्रकार से जल और वायु प्रदूषित कर रहा है। चिंतक तो यह भी संभावना व्यक्त कर रहे हैं कि तृतीय विश्वयुद्ध पानी की कमी को लेकर होगा। अनावश्यक अग्नि का व्यवहार पृथ्वी पंडल और वायु मंडल के असंख्य जीवों का हनन कर रहा है। हाल ही में हमने देखा कि भारत की राजधानी दिल्ली में लोग मास्क महककर घूम रहे हैं तथा शिक्षण संस्थानों को प्रदूषण के कारण बंद करना पड़ा है। ये स्थितियां किस प्रकार के विकास को दर्शाती हैं। पिछले दिनों अखबारों की सुर्खियाँ थी कि कुछ युवाओं ने अठारह कुत्तों को मार डाला। पिछले दिनों खबर यह भी रही कि स्कूल में यूनिफार्म में न आने के कारण विद्यार्थियों को कक्षा में निर्वस्त्र बैठने की सजा सुनाई गई। इतना ही नहीं हमारी बहन-बेटियों के साथ तथा अल्पवय की बच्चियों के साथ दुराचार की घटनाएं मनुष्य की भयावह हिंसात्मक वृत्ति की ओर संकेत करती है। इसके अलावा भी न जाने कितनी हिंसक घटनाएं अनेक रूपों में हमारे आसपास घट रही हैं, यह गहरी चिंता का विषय हैं।

हमारे समय का विसंगतिपूर्ण सत्य यह भी है कि शिक्षा के प्रति

जागरूकता तो बढ़ी, वैज्ञानिक चिंतन भी विकसित हुआ, औद्योगिक विकास ने उत्पादन की प्रक्रिया भी तेज की, तकनीकी विकास से सूचना के क्षेर में क्रांति आई लेकिन साथ ही साथ भोगवादी वृत्ति को बढ़ावा मिला। पारिवारिक रिश्तों एवं मानवीय संबंधों में शिथिलता आई, मन की दूरियां बढ़ीं तथा स्वार्थ और अधिकार लिप्सा का भाव ब्रहल हुआ। कुछ ऐसी ही विसंगतियों से त्रास्त होकर महाप्राण निराला जी ने लिखा था -

गहन है यह अंधकारा
स्वार्थ के अवगुंठनों से
हुआ है लुंठन हमारा।
खड़ी है दीवार जड़ की घेरकर
बोलते हैं लोग ज्यों मुँह फेरकर
इस गगन में नहीं दिनकर, नहीं शशिधर, नहीं तारा।

यह चिंताजनक स्थिति आज के समय की है। इतिहास साक्षी है कि जब-जब मनुष्य समाज आत्मोत्ाान को छोड़कर केवल भौतिक प्रगति की ओर अग्रसर हुआ है तब-तब आसुरी शक्तियां विकसित हुई हैं और मनुष्य अपनी मनुष्यता छोउ़कर दनुजता की ओर बढ़ने लगा है। इन विकराल स्थितियों से मुक्तमार्ग की दिखा हमारे तीर्थंकरों, ऋषियों, मनीषियों तथा आचार्यों ने समय-समय पर दी है। उनमें से एक मार्ग है अहिंसा का, जो जैन धर्म और दर्शन का प्राणतत्व है जिव पर जैन धर्म और दर्शन अवलम्बित है। समय की इन चुनौतियों से मुकाबला अहिंसा दर्शन को आत्मसात करके ही किया जा सकात ळे।

समणसत्तम् में संकलित अहिंसा का यह सूत्र बताता है कि -

तुंगं न मंदराओ आगासाओ विसालयं नत्थि।

जह तह जयंमि जाणसु, धम्ममहिंसासमं नत्थि।।

(श्लोक - समणसुततं 158)

अर्थात् जैसे जगत् में मेरु पर्वत से ऊँचा और आकाश और कुछ नहीं है, वैसे ही अहिंसा के समान कोई धर्म नहीं है।

वह मूल तत्व है, जिसके अंतर्गत सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह जैसे सिद्धान्त समाहित हैं। हमारे शास्त्रों में आचार्यों ने इसका सूक्ष्मता से विशद विचेन किया है।

सामान्य अर्थ में अहिंसा शब्द का अर्थ किसी भी जीव को न माना, किसी भी जीव का वध न करना होता है। परंतु यह अहिंसा का सीमित अर्थ है। अहिंसा का व्यापक अर्थ है - मन से, वचन से तिाा कर्म से किसी का बुरा न चाहना, किसी के ह्रदय को चोट पहुँचाने वाले शब्दों का प्रयोग न करना, अपने कर्म से किसी को न सताना तथा किसी का वध न करना।

आचारांग सूत्र में लिखा है - जो तीर्थंकर भूतकाल में हो चुके हैं, जो वर्तमान काल में हैं और भविष्य काल में होंगे, उन सबके उपदेशों का सार यही है, एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक की जीवों की हिंसा नहीं करनी चाहिए। उन्हें शारीरिक या मानसिक कष्ट नहीं देना चाहिए, उनके प्राणों का नाश नहीं करना चाहिए-यही अहिंसा धर्म नित्य और शाश्वत है।

दशवैकालिक सूत्र में भगवान महावीर कहते हैं - अत्तसमे मन्निज्ज छप्पिकाये अर्ााित छत जीव निकाय को अपनी आत्मा के समान समझो सूत्रकृतांक में कहा - आय तुले पयासु अर्थात प्राणी मात्र को आत्मतुल्य समझो। आचारांग सत्र में एक स्थल पर यह भी

कहा गया कि - हे पुरुष ! जिसे तू मारने की इच्छा करता है, विचार कर, वह तेरे जैसा ही सुख-दुःख का अनुभव करने वाला प्राणी है, जिस पर हुकूमत करने की इच्छा करता है, जिसे दुःख देने का विचार करता है, जिसे अपने वश में करने की इच्छा करता है।

जिसके प्राण लेने की इच्छा करता है विचार कर वह तेरे जैसा ही प्राणी है जो विवेकशील पुरुष है, वह न किसी को मारता है और न किसी का घात करता है।

आचारांग सूत्र में भगवान करते हैं - सभी जीव सुखाभिलाषी हैं, दुःख संसार के सभी प्राणियों को अप्रिय है। जीवन प्रिय और मरण अप्रिय है

सुहसाया दुहहपडिकूला पियजीविणो, अप्पिवहा।।

भगवान महावीर की अहिंसा केवल मनुष्य के लिए ही नहीं, अपितु संपूर्ण ब्रह्माण्ड के जीव-जगत के लिए है। आचारांग सूत्र में भगवान कहते हैं - संसार के प्रत्येक प्राण (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय) भूत (वनस्पति) जीव (पंचेन्द्रिय) और सत्त्व (पृथ्वीकाय, अपकाय, तेउकाय और वायुकाय) ये सभी प्राणी के इच्छुक हैं। अशांति महाभय रूप है, दुःख व कष्टप्रद है -

निज्झाइत्ता पडिलेहित्ता पत्तेयं परिरिव्वाणं, सव्वेसिं पाणाणं सव्वेसिं भूयाणं, सव्वेसिं जीवाणंख्सव्वेसिं सत्ताणं, अस्यायं अपरिनिव्वाणं महब्भयं दुक्खति।

भगवान महावीर की दृष्टि में पर्यावरण के प्रति असंवेदित व्यवहार तथा उसकी पीड़ा की उपेक्षा करना हिंसा है तथा अपने चारों ओर व्याप्त जीव-जगत का नुकसान न करना, पर्यावरण को

क्षतिग्रस्त नहीं करना अहिंसा है। दशवैकालिक सेत्र में भगवान करते हैं - **अहिंसा निउणा दिट्ठा, सव्व भूएसु संजमो** अर्थात सब जीवों के प्रति संयमपूर्ण व्यवहार ही अहिंसा है।

योग शास्त्र में कलिकाल सर्वज्ञ हेमचंद्राचार्य ने स्पष्ट घोषणा की, कि कोई व्यक्ति कितनी भी धार्मिक क्रियाएं करे, यदि वह हिंसा का त्याग नहीं करता तो सारी क्रियाएं व्यर्थ है, वे कहते हैं-

दमो देवगुरुपास्तिर्दानमध्ययनं तपः।
सर्वमष्येतदफल हिंसा चेन्न परित्जेत्।।

अर्थात् जब तक कोई व्यक्ति हिंसा का त्याग नहीं कर देता, तब तक उसका इंद्रिय दमन, देव और गुरु की उपासना, दान, शास्त्र अध्ययन और तप आदि सब बेकार है, निष्फल है।

अहिंसा के रूप में महावीर ने नकारात्मक विधान नहीं दिया, उनकी अहिंसा में शत्रु का दमन नहीं, शत्रु के दुर्भावों का दमन है। दुष्टों से प्रतिकार या प्रतिशोध नहीं, बल्कि उनमें दया-करुणा-प्रेम और सदाशयता को रूपायित करने की प्रेरणा है। महावीर ने अहिंसा के रूप में परतंत्रता और शोषण के प्रतिकार का महाबलशाली शस्त्र दिया, जिसके सार्थक परिणाम महात्मा गांधी के सत्याग्रह और नेल्सन मंडेला की उपलब्धियों में देखे जा सकते हैं। उनकी अहिंसा, अभय और मैत्री के दरवाजे खोलती है। सारे संसार में निःशस्त्रीकरण संभव है। महावीर ने जीयो और जीने दो का केवल उद्घोष ही नहीं किया बलिक अपने जीवन की प्रयोगशाला में प्रयोग करके अहिंसा की शक्ति को सिद्ध कर दिया। भयंकर दृष्टिविष सर्प चंडकौशिक के सारे प्रयत्न महावीर के अहिंसक व्यवहार से सिफल हो गए। उसका दृष्टिविष धुल गया और

उासक रोप-रोप में शान्ति सुधा व्याप्त हो गई। यह भगवान महावीर की अहिंसा ही थी जिसने विषधर को भी अपना बना लिया।

इस संदर्भ में मैं पातंजलि योगदर्शन का यह सूत्र उद्वत करना चाहती हूँ -

अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्संनिधौ वैरत्यागः

अर्थात् जब व्यक्ति की अहिंसा दृढ़ हो जाती है तब उसक समीप रहने वाले पशु आदि भी हिंसा के भाव और वैर के भाव को छोड़ देते हैं। इतिहास में ऐसे अनेक प्रमाण जहाँ अहिंसक वातावरण में हिंसक प्राणी भी हिंसा छोड़ देते हैं। प्रसिद्ध योगाचार्य परमहंस स्वामी सत्यानन्द सरस्वती जी कहते हैकं कि ऐसे अहिंसक व्यक्ति के आसपास वैरत्याग का एक चुंबकीय दायरा निर्मित होता है। उस अहिंसक व्यक्तित्व के परमाणु उसके आसपास के प्राणियों की हिंसक वृत्तियों को समाप्त कर देते हैं। यही स्थिति चंडकौशिक के प्रकरण में भगवान महावीर ने दुनिया के सामने प्रत्यक्ष कर दी।

जैन शास्त्रों में स्थान-स्थान पर कहा गया है कि जैसे तुम्हें दुःख प्रिय नहीं है वैसे ही सब जीवों को दुःख प्रिय नहीं है - ऐसा जानकर, पूर्ण आदर और सावधानी पूर्वक आत्मौपम्य की दृष्टि से सब पर दया करो।

जह ते न पिअं दुक्खं, जाणिअ एमेव सव्वजीवाणां।
सव्वायरमुवउत्तो अत्तोवम्मेण कुणसु दयं।। 4।।

(श्लोक - समणसुत्तं 150)

महावीर की अहिंसा में यही आत्मौपम्य दृष्टि थी जिसने उनके हृदय में अक्षय प्रेम का स्रोत प्रवाहित कर दिया था। जिससे

निकली थी - मैत्री, करुणा और सेवा की धारायें। जिसमें मनुष्य ही नहीं, सृष्टि का अणु-अणु समा गया था।

यहाँ मैं इस तथ्य को रेखांकित करना चाहती हूँ कि समस्त भरतीय दर्शन का चिन्तन अहिंसा पर आधारित हैं। सभी ने अहिंसा पालन को पूरी गहराई के साथ मान्यता दी है। वैदिक युग में संगच्छध्वं संगवद्धवं संवोमनांसि जानताम् अर्थात् तुम मिलकर चलो, तुम मिलकर बोलो, तुम्हारे मन साथ-साथ विचार करें - इस रूप में मनुष्य की चेतना को उस उदात्त भूमि पर ले जाने की दिशा दी गई है जहाँ मन में अपने और पराये का भेद समाप्त जाता है। यह चेतना ही तो अहिंसा है। चेतना के इस धरातल पर घृणा, विद्वेष और हिंसा के भावों के लिए स्थान ही नहीं होता। ईशावास्योपनिषद् में ऋषि कहते हैं कि जो सभी प्राणियों को अपने में और अपने को सभी प्राणियों में देखता है, वह अपनी इस एकत्व अनुभूति के कारण किसी से घृणा नहीं करता, यह भावबोध अहिंसा नहीं तो और क्या है?

अहिंसा के विषय में महाभारत में कहा गया है -

अहिंसा परमो धर्म-स्तथाऽहिंसा परो दमः
अहिंसा परमं दान-अहिंसा परमं तपः
अहिंसा परमो यज्ञ स्तथाऽहिंसा परं फलम्।
अहिंसा परमं मित्र-अहिंसा परमं सुखम्।।

अर्थात् अहिंसा परम धर्म है, अहिंसा उत्कृष्ट इंद्रिय दमन है, अहिंसा उत्कृष्ट दान है, अहिंसा परम तप है, अहिंसा परम यज्ञ है और अहिंसा ही मोक्ष रूपी उत्कृष्ट फल देने वाली है, अहिंसा परम मित्र है और परम सुख का साधन है।

श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण का यह कथन कि जिससे लोग संतप्त या क्षुब्ध नहीं होते, जो स्वयं भी लोगों से त्रास का अनुभव नहीं करता, प्रिय के लाभ से जो प्रफुल्लित नहीं होता, दूसरों के उत्कर्ष से जिसे ईर्ष्या नहीं होती, जो भय और उद्वेग से मुक्त है, वह मुझे प्रिय है। यह अहिंसा के आदर्श रूप को ही व्यक्त करता है -

यस्मात्रोद्विजते लोको लोकात्रोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः च मे प्रियः

महर्षि व्यास ने अठारह पुराणो का सार यही बताया कि परोपकार ही पुण्य है एवं दूसरों को कष्ट पहुँचाने से बड़ा कोई पाप नहीं हैं -

अष्टादशःपुराणेषु, व्यासस्य वचनं द्वय
परोपकाराय पुण्याय पापाय पर पीड़णम्

रामचरित मानस में भी कहा है -

परम धर्म श्रुत विदित अहिंसा, पर निन्दा सम अघ न गरीसा।
परहित सरिस धर्म नहीं भाई, पर पीड़ा सम नहीं अधमाई।

भगवान महावीर ने हिंसा चार प्रकार की बताई है -

1. आरंभी हिंसा, 2. उद्योगी हिंसा, 3. विरोधी हिंसा

4. संकल्पी हिंसा

गृहस्थ खाने के लिए भोजन पकाते हैं, पानी पीते हैं, रहने के लिए मकान बनवाते हैं, पहनने-ओढ़ने के लिए कपड़े बनवाते हैं, यह **आरंभी हिंसा** है।

खेती करते हैं, कल-कारखाने चलाते हैं, व्यापार करते हैं, यह **उद्योगी हिंसा** है।

राष्ट्र-जनता और कुटुम्ब की रक्षा करते हैं, आततायियों से लड़ते हैं, अपने आश्रितों को आपत्तियों से बचाते हैं, छल-बल आदि संभव उपायो का प्रयोग करते हैं, वे **विरोधी हिंसा** है।

द्वेष वश या लोभ वश दूसरों पर आक्रमण करते हैं, बिना प्रयोजन के किसी को सताते हैं, दूसरों का अधिकार छीनते हैं, तुच्छ स्वार्थों के लिए मनमाना प्राण वध करते हैं। वृत्तियों को उच्छृंखल करते हैं, यह **संकल्पी हिंसा** है।

इस प्रकार हिंसा के चार प्रमुख वर्ग किये गये हैं। गृह त्यागी मुनि इन चारों प्रकार की हिंसाओं को त्यागते हैं, गृहस्थ पहली तीन प्रकार की हिंसाओं को पूर्ण रूप से नहीं त्याग पाते लेकिन यथासंभव त्यागने का प्रयत्न करते हैं। संकल्पी हिंसा का सीधा उद्देश्य हिंसा ही होता है। अतः सामुहिक न्याय-नीति व्यवस्था का उल्लंघन भी इस प्रकार की हिंसा में हो जाता है और जिसका अभिशाप समूचे राष्ट्र और समाज को भोगना पड़ता है।

प्रश्न उठता है कि कर्म करने से तो थोड़ी हिंसा होना स्वाभाविक ही है तो भगवान श्री ऋषभदेव ने असि, मसि, कृषि और शिल्प आदि की शिक्षा मनुष्य समाज को क्यों दी ? आचार्य कहते हैं कि भगवान ऋषभदेव ने प्रजा के अभ्युदय के लिए प्रवृत्ति मार्ग का उपदेश दिया और आत्महित के लिए निवृत्ति मार्ग का। उन्होंने असि, मसि और कृषि की व्यवस्था और कला का उपदेश इसलिए किया था कि जनता चोरी आदि जघन्य कर्मों से बच सके और हिंसा में कमी आ सके और उन्होंने इसके द्वारा एक धर्मनिष्ठ

और सुंसस्कृत समाज की रचना की।

वस्तुतः हिंसा मन की विकृत अवस्था का परिणाम है, काम, क्रोध, लोह, मोह, मद, मात्सर्य के भाव ही हिंसा को जन्म देते हैं। ये कषाय पहले मन में जन्म लेते हैं फिर कार्य में घटित होते हैं।

महावीर मनुष्य-मन की गहराइयों में जाकर कारण ढूंढते हैं और कहते हैं -

दुक्खं हयं जस्स न होइ मोहो
मोहो हयो जस्स न होइ तण्हा
तण्हा हया जस्स न होइ लोहो
लोहो हयो जस्स न किंचणइ।।

जिसे मोह नहीं उसे दुःख नहीं, जिसे तृष्णा नहीं, उसे मोह नहीं, जिसे लोभ नहीं, उसे तृष्णा नहीं और जिसे परिग्रह नहीं, उसका लोभ नष्ट हो गया और जिसका लोभ नष्ट हो गया, उसका चित्त विकारों से मुक्त हो गया और शुद्ध हो गया।

ऐसे शुद्ध हृदय में ही वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना का जन्म और पोषण होता है लेकिन हिंसक मनोवृत्तियाँ हैं वहाँ कुटुम्ब की भावना का प्रश्न ही नहीं उठता। वहाँ तो बाजार की अवधारणा बनती है और बाजार में खरीद फरोख्त होती है, स्पर्धा होती है और स्वार्थ होता है। यही स्वार्थ अशांति, असंतुलन और हिंसा का कारण बनता है।

इसी प्रकार श्रीमद्भगवद्गीता में श्रीकृष्ण चित्त की विषयासक्ति को पूर्ण अधःपतन का कारण बताते हुए बहुत ही मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मनुष्य के पतन के कारण को उद्घाटित करते हुए कहते हैं।

ध्यायतो विषयान्युंसः सङ्गस्तेषूपजायते।
संगात्सञ्जायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते
क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति

(- गीता 02/62-63)

अर्थात् विषयों का चिंतन करने वाले पुरुष की विषयों में आसक्ति हो जाती है, आसक्ति से कामना उत्पन्न होती है तथा कामना पूर्ण न होने पर क्रोध होता है। क्रोध से मनुष्य का विवेक समाप्त हो जाता है। विवेक समाप्त होते ही उचित-अनुचित का ज्ञान नहीं रहता। इस विस्मरण से बुद्धि का अर्थात ज्ञान शक्ति का नाश हो जाता है और मनुष्य का पतन हो जाता है और मन की ऐसी भूमि में ही हिंसा का जन्म होता है।

वस्तुतः अहिंसा का सिद्धान्त चित्त के शुद्धिकरण की प्रक्रिया का आदर्श है, जिसमें सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह के महाव्रतों का पालन स्वयमेव हो जाता है। अहिंसक व्यक्ति का असत्य से दूर-दूर तक कोई संबंध नहीं होता। सत्यव्रती या सत्याग्रही का आंतरिक बल उसे किसी भी असद् स्थिति से समझौता करने ही नहीं देता। जैसे प्रकाश के समक्ष अंधेरे की सत्ता ही नहीं रहती, वैसे सत्यबल के समक्ष असत्य परास्त हो जाता है। सत्यव्रती में किसी दूसरे की वस्तु के अपहरण की भावना के लिए अवकाश ही नहीं होता। अतः अहिंसक चित्त में अचौर्य का गुण स्वतः समाविष्ट हो जाता है। अहिंसक मनुष्य की ज्ञानेन्द्रियां और कर्मेन्द्रियां सभी भोगवृत्तियों से उपरत हो जाती है, क्योंकि भोगों के विरुद्ध उसकी चेतना सदैव जागृत रहती है। अतः ब्रह्मचर्य पालन की उसकी

प्रकृति बन जाती है। और जब भोग वृत्ति ही नहीं रही तो परिग्रह का प्रश्न भी नहीं रहा। उसका अपरिग्रह व्रत स्वभावतः सिद्ध हो जाता है। इस प्रकार अहिंसा का दर्शन चित्त का शोधन करता है, अहिंसा के सिद्धान्त को विज्ञानपूर्वक समझकर अर्थात् सम्यक रूप से समझकर यदि कोई आत्मसात् करे तो यह धरती स्वर्ग बन सकती है। सारे दुःख, परिताप, कष्ट समाप्त हो सकते हैं। मनुष्यता अपने उज्ज्वल रूप में, सुन्दर रूप में दिखाई दे सकती है परंतु अनिवार्य शर्त है कि अपनी सोच को, अपने मन को अहिंसक बनाना होता। तभी अहिंसा अपने पूर्ण सौन्दर्य के साथ प्रतिफलित हो सकती है।

उक्त तथ्यों के आलोक में हम देख सकते हैं कि सभ्यता के आरंभिक काल से ही भारत में अहिंसा को सर्वाधिक महत्वपूर्ण जीवनदर्शन के रूप में अपनाने पर बल दिया गया है। समय-समय पर दार्शनिकों एवं चिंतकों ने उसके सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्ष पर जिस व्यापकता के साथ और उसके विभिन्न पहलुओं पर जिस प्रकार सर्वांगीण रूप से प्रकाश डाला है, वह अतुलनीय है। अहिंसा पूरी सृष्टि और खासकर मानवता के कल्याण का आधारभूत तत्व है, इस तथ्य को प्रतिष्ठित करने का महत प्रयास भारत में हुआ, जो परवर्ती काल में पूरे विश्व में फैला।

पाश्चात्य जगत के अनेक दार्शनिकों, चिंतकों और विचारकों ने अहिंसा के संबंध में भारतीय दार्शनिकों विशेषकर विश्वशांति के परिप्रेक्ष्य में गांधी के विचारों को अपनाने पर जोर दिया है। इस दृष्टि से नेल्सन मंडेला, मार्टिन लूथर किंग (जू), हो ची मिन्ह, दलाई लामा, हैली सेलासी, लूईस फीशर, यू थांट, बिल डूरैंट,

जार्ज बर्नार्ड शॉ, पर्ल एस बक, एएल गोरे, अल्बर्ट आइंस्टिन, जॉन आइंस्टिन, जान नैनन, बैराक ओबामा, आंग सान सू की, रिचार्ड एटनबरो, स्टीव जॉब्स आदि नाम उल्लेखनीय हैं।

अंत मे मैं यही कहना चाहती हूँ कि विश्व शांति और अहिंसा पर यह चर्चा एक सकारात्मक संकेत तो है लेकिन जब तक अहिंसा के सिद्धान्त को जन-मन के धरातल पर स्वीकृति नहीं मिलेगी, जब तक यह जन-जन का संकल्प नहीं बनेगा, तब तक इसका व्यवहार में आना कठिन है। पर सत्य यही है कि अहिंसा वह बीज मंत्र है, जिसको साधकर विश्वस्तर पर शांति, बंधुत्व और मैत्री का सुखद संगीत सुना जा सकता है।

बच्चों के लालन-पालन में जैन दृष्टि

- डॉ. श्वेता जैन

बच्चों के लालन-पालन का मतलब है - पेरेन्टिंग या परवरिश। पेरेन्टिंग में यदि जैन सिद्धान्तों को फालो किया जाए तो यह कार्य आसान हो सकता है। उसी पर अपनी बात रखने जा रही हूँ।

बच्चों का विकास डिपेन्ड करता है उसकी पेरेन्टिंग पर। जैसी उसकी पेरेन्टिंग होती है वैसा वह बनने लगता है। हम देखते हैं कि परिवार में बच्चे जैसा व्यवहार करते हुए देखता है बड़ा होकर वह दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करता है। यह ठीक वैसे ही है जैसे खिलाड़ी खेल के मैदान के जाने से पूर्व नेट पर अभयास करता है और बाद में उसी अभ्यास के अनुरूप खेल के मौदान पर अपना प्रदर्शन करता हैं। इस सम्बन्ध में एक लेखक की बात मुझे याद आ रही है वे लिखते हैं -

- ✧ बच्चा आलोचना के माहौल में रहता है तो निन्दा करना करना सीख जाता है।
- ✧ प्रशंसा के माहौल में रहता है तो तारीफ करना सीख जाता है।
- ✧ सहनशीलता के माहौल में रहता है तो धैर्य रखना सीख जाता है।

- ✧ लड़ने के माहौल में रहता है तो झगड़ना सीख जाता है।
- ✧ बेहूदे और खिल्ली उड़ाने वाले माहौल में रहता है तो एंकोच करना सीख जाता है।
- ✧ प्रोत्साहन वाले माहौल में रहता है तो आत्मविश्वास करना सीख जाता है।
- ✧ शर्मिंदगी के माहौल में रहता है तो खुदर को दोषी मानना सीख जाता है।
- ✧ समर्थन करने वाले माहौल मं रहता है तो खुद को पसन्द करना सीख जाता है।
- ✧ न्यायसंगत वाले माहौल में रहता है तो इंसाफ करना सीख जाता है।
- ✧ सुरक्षा के माहौल में रहता है तो भरोसा करना सीख जाता है।
- ✧ सहमति और दोस्ती के माहौल में रहताहै तो वह दुनिया में प्यार ढूंढ लेना सीख लेता है।

इन सभी का सार यही है कि हम जैसा माहौल बच्चों को देंगे वह वैसा बनता जाएगा। अतः माता-पिता की बहुत बड़ी जिम्मेदारी होती है कि वह बच्चों के साथ सन्तुलित व्यवहार करें ताकि बड़ा होकर समाज के प्रति उसका रवैया संतुलित हो।

बच्चों के विकास को लेकर पेरेन्ट जब सोचते हैं तो उसे शारीरिक औ बौद्धिक विकास के बारे में ही सोचते हैं, बहुत कम पेरेन्ट्स होते हैं जो उसके सर्वांगीण विकास पर बात करते हैं। बच्चे

के सम्पूर्ण या सर्वांगीण विकास की बात आती है तो शारीरिक और बौद्धिक विकास के साथ भावनात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक विकास की दृष्टि को भी ध्यान में रखा जाता है। इस सर्वांगीण अथवा सन्तुलित विकास में अहिंसा, सत्य, अचौर्य, अनेकान्त, अपरिग्रह, परस्पर-उपग्रह, कर्मसिद्धान्त, कषाय-विजय आदि सिद्धान्त एक दृष्टि प्रदान करते हैं। यह दृष्टि बच्चों को हर वातावरण में हर परिस्थिति में समन्वय स्थापित कर जीने में समर्थ बनाती है। जीवन के हर पड़ाव पर, मुश्किलों में, विपरीत परिस्थिथतियों में सम्बल प्रदान करती है।

अहिंसक जीवनशैली

सबसे पहले अहिंसा सिद्धान्त की बात करते हैं। यदि हमारी जीवनशैली अहिंसक होती है यानी अहिंसा को प्रेक्टिकल रूप में जीते हैं तो उसका प्रभाव बच्चों पर अवश्य पड़ता है, वे स्वस्थ और प्रसन्नचित्त रहते हैं। स्वस्थता दो बातों पर टिकी है - पहली शान-पान को न्यूट्रीशन आदि से परिपूर्ण होना और दूसरी चित्त में प्रसन्नता का होना। यदि चित्त में अप्रसन्नता है तो अच्छे न्यूट्रीशन (पोषकतत्व) भी शरीर को स्वस्थ नहीं रख सकते। अतः स्वस्थ रहने का प्रमुख आधार है चित्त में प्रसन्नता। चित्त की प्रसन्नता अहिंसक जीवन शैली से सम्भव है। क्रोध, अहंकार है चित्त में प्रसन्नता। चित्त की प्रसन्नता अहिंसक जीवन शैली से सम्भव है। क्रोध, अहंकार, लोभ आदि में कमी होने पर व्यक्ति की जीवन शैली अहिंसक होती है।

ऐसे वातावरण में पला बच्चा बड़ा होकर छोटी छोटी बातों पर क्रोध नहीं करता धन-वैभव-पद-सत्ता से युक्त होकर भी वह

विनम्र एवं करुणाशील होता है, लोभवश होकर दूसरों के हक को नहीं छीनता है। घर में भी वह सदैव सबसे प्रेम से बात करता है, किसी के गलत व्यवहार करने पर प्रेम से समझाता है, नौकर एवं कर्मचारियों के साथ मानवीय व्यवहार करता है और मुफ्त में मिल रही चीजों को पाने की इच्छा नहीं करता है। माता-पिता या अभिभावक इस दृष्टि से जीवन जीते हैं और अपने बच्चों को भी ऐसी अहिंसक जीवन शैली हेतु प्रोत्साहित करते हैं तो वे स्वस्थ रहते हैं और प्रसन्न रहते हैं।

सत्य के व्यवहार से बढती सत्य-निष्ठा

माता-पिता घर में सत्य का व्यवहार करते हैं तो बच्चों में सत्य-निष्ठा बढ़ती है। सत्य अणुव्रत को धारण करने वाले व्रती माता-पिता बच्चों के साथ सत्य बोलते हैं अर्थात् जैसा बोलते हैं वैसा ही व्यवहार करते हैं तो बच्चों को सत्य बोलने की आदत बनती है। ऐसे परिवार में पला बच्चा परीक्षा में नकल करने की कभी नहीं सोचता है, डींगे हांकना उसे अच्छा नहीं लगता, गलत कार्य होने पर छिपाता नहीं है। ऐसा बच्चा बड़ा होकर व्यापार, धंधा, नौकरी, जिस किसी कार्य को करता है, उसे ईमानदारी और निष्ठा के साथ करता है। वह कालाबाजारी, मुनाफाखोरी, रिश्वतखोरी, ठगाई, जालसाजी, झूठे दस्तावेज, झूठे आरोप लगानार, किसी के साथ विश्वासघात करना जैसे शासन विरोधी कार्य नहीं करता है।

अचौर्य व्रत से दूर होती दुर्भगता

अचौर्य व्रत के पालन से बच्चों की विश्वसनीयता बढ़ती है। यदि पिता या माता अपने नौकरी स्थलों से पेन, कागज जैसी मामूली वस्तुएँ उठाकर ले आते हैं और उन्हें अपने बच्चों को

उपयोग में लेने के लिए देते हैं तो यह आदत बच्चों में छोटी-छोटी चोरी करने को बढ़ावा देती है। अतः माता-पिता को बिना पूछे किसी भी वस्तु को नहीं लेने का संस्कार बच्चों को देना आवश्यक है, इस संस्कार को अचौर्य अणुव्रत के माध्यम से दिया जा सकता है। बच्चों को यह भी समझाना आवश्यक है कि मनुष्य को अपनी आवश्यकताएँ अपने पुरुषार्थ के द्वारा प्राप्त साधनों से ही पूर्ण करनी चाहिए। यदि कभी प्रसंगवश दूसरों से भी कुछ लेना हो तो वह सहयोगपूर्वक मित्रता के भाव से दिया हुआ ही लेना चाहिए। यदि तुम्हारी वस्तु की कोई चोरी करे तो उसके लिए तुम्हारे मन में दुर्भावना जगती है वैसे ही किसी की वस्तु तुम चुराओगे तो उसके मन में दुर्भावना जगेगी। यह दुर्भावना दुर्भाग्य लाती है। कहा भी गया है - दौर्भाग्यं च दरि्रित्वं लभते चौर्यतो नरः (उपदेश प्रसाद, भाग 1) चोरी करने से मनुष्य दौर्भाग्य और दरिर्ता को प्राप्त करता है।

अनेकान्त दृष्टि से बढ़ती है बच्चों में समझ

जैनदर्शन में अनेकान्त का सिद्धान्त बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है। अनेकान्तिक दृष्टि से किया गया बच्चों का लालन-पालन बच्चों में समझ बढ़ाता है। माता-पिता का एकांगी व्यवहार बच्चों के जीवन पर नकारात्मक प्रभव डालता है। जैसे कुछ माता-पिता बच्चों को हर चीज के लिए हाँ बोलते हैं अथवा कुछ माता-पिता हर चीज के लिए ना बोलते हैं ये दोनो व्यवहार एकांगी है। माता-पिता को अपने व्यवहार को अनेान्तिक बनाना चाहिए, अन्यथा बच्चे का सन्तुलित विकास नहीं होगा। इन बातों को समझने के लिए एक परिदृश्य पर विचार करते हैं -

जहाँ बच्चों को हर चीज के लिए हाँ कहा जाता है, ऐसा अमीर परिवारों में और दोनो कामकाजी माता-पिता वाले परिवारों में अधिक होता है। वे सोचते हैं कि हम बच्चों को समय नहीं दे पा रहे हैं तो इनकी इच्छाएँ तो पूरी कर ही सकते हैं। ऐसे परिवारों में बच्चों को हर चीज के लिए हाँ कह दिया जाता है, जो उसको जिद्दी तो बनाता ही है साथ ही यह मानसिकता उत्पन्न कर देता है कि उसकी जरूरतें पूरी करना दुनिया की जिम्मेदारी है। भविष्य में समाज से भी हाँ की ही उम्मीद करेगा। बड़ा होकर किसी की ना सुनने पर वह डिप्रेशन में चला जाएगा, प्रतिक्रिया स्वरूप क्रोधी हो जाएगा या कठिनाई का अनुभव करेगा। इसके विपरीत यदि बच्चे को हमेशा माता-पिता ने प्रत्येक कार्य के लिए ना ही किया है तो उसका आत्मविश्वास कम हो जाएगा। बड़ा होकर वह कोई भी कार्य करेगा तो आत्मविश्वास की कमी के कारण किसी के द्वारा निन्दा करने पर या कमी निकालने पर हताश और निराश हो जाएगा। अतः संतुलित विकास के लिए बच्चों को हाँ या ना का उत्तर देने से पहले तीन बार सोचें। यदि जो वह करना चाहता है, उसमें कोई नुकसान नहीं है तो करने दीजिए। ना करने पर उसे कारण बताएँ अथवा उसे दूसरा कार्य बताकर भी बात का सन्तुलित रूप से उत्तर दिया जा सकता। इस प्रकार एकांगी दृष्टि वाले माता-पिता अपने बच्चों की परवरिश अच्छी तरह से नहीं कर पाते हैं।

कई बार ऐसा देखा जाता है कि जिन माता-पिता की व्यापक दृष्टि नहीं होती है, वे अपनी इच्छाएं बच्चों पर लादते हैं, वे चाहते हैं कि मैं तो इंजीनियर नहीं बन पाया या डॉक्टर नहीं बन पाया या आई.ए.एस. नहीं बन पाया तो मेरे बच्चे को बनना है। वे नहीं

सोचते कि मेरे बच्चे की क्या इच्छा है या उसके अन्दर क्या बनने की काबिलियत है। ऐसे मां-बाप के बच्चे कुण्ठित होने लगते हैं। इसके विपरीत जिनकी व्यापक दृष्टि या अनेकान्तिक दृष्टि होती है, वे बच्चों पर अपनी इच्छा नहीं लादते। वे उनके टेलेन्ट को पता करने के लिए विज्ञान के टेस्ट भी करवाकर उनके विकास का ख्याल रखते हैं। जैसे आजकल एक टेस्ट होता है - DMIT इस टेस्ट से बच्चे का इण्टेलीजेन्स, व्यक्तित्व, कैरियर आदि का पता चलता है। काउंसलिंग के द्वारा माता-पिता को पता चलता है कि उन्हें अपनी परवरिश में क्या परिवर्तन करना है। वे अपने में परिवर्तन के लिए हर प्रयत्न करते है।

आजकल बच्चे कम उम्र में विद्यालय जाने लगते हैं, जिसकी वजह से उनकी तर्कशक्ति बढ़ जाती है, अतः बच्चों को बिना तर्क के बात समझ में नही आती। इस वजह से वे माता-पिता के आज्ञापालक नहीं होते तो एकांगी दृष्टि वाले माता-पिता उनकी आलोचना करते हैं। वहीं दूसरी ओर व्यापक दृष्टि वाले माता-पिता तर्क से बात बच्चों को समझाते हैं।

धर्म संस्कारों की जब बात आती है तो कई माता-पिता सामायिक और प्रतिक्रमण के स्मरण होने पर ही उसकी इतिश्री मान लेते हैं जबकि व्यापक दृष्टि वाले माता-पिता विनय, सेवा, सुश्रूषा, सहयोग की भावना, ईर्ष्या-द्वेष नहीं करना, पर-निन्दा नहीं करना, ईमानदारी, सत्यभाषण, संयमित जीवन जैसे धार्मिक संस्कारों के विकास पर भी ध्यान देते हैं।

वर्तमान युग साधनों और भोगों की क्रान्ति का युग है। जितने साधन पहले के एक राजा के पास नहीं होते थे, उनसे कही अधिक

साधन आम आदमी के पास हैं। ऐसी स्थिति में साधनों का सम्यक् उपयोग कैसे होता है, इस बात को बच्चे को सिखाना और अभिभवकों को सीखना अति आवश्यक है। अनेकान्त दृष्टि से यह सिखाना आसान होता है।

शिक्षा पद्धति बच्चों को तार्किक और बुद्धिमान तो बना रही है, किन्तु उसे भीतर उठने वाली भावनाओं को कैसे संयमित किया जाता है, इसकी शिक्षा नहीं देती। उसी का परिणाम है कि अनुत्तीर्ण होने पर बच्चा आत्महत्या कर देता है, हताश होने पर हिंसक बन जाता है। इसके लिए बचपन से ही नकारात्मक भावनाओं से बच्चों को निकलना सिखाना आवश्यक है और सकारात्मक भावनाओं से वह सदा जुड़ा रहे, इस बात पर अभिभावकों को ध्यान देना चाहिए। नम्बर कम आने पर, खेल में हार जाने पर, दूसरों बच्चों द्वारा चिढ़ाने पर, बीमार हो जाने आदि विभिन्न स्थितियों में बच्चे के भीतर नकारात्मक भाव आने लगते हैं, उस समय बच्चों को वैचाकि सम्बल की आवश्यकता होती है।

अनेकान्त दृष्टि से बच्चों के विकास हेतु कई संस्कार दिए जा सकते हैं -

- ✧ बच्चों में प्रतिकूल परिस्थितियों में धैर्य रखने की आदत डालनी चाहिए। प्रतिकूलता से घबराए तो धीरे-धीरे समझाकर उनसे मुकाबला करने की मानसिकता बनानी चाहिए।
- ✧ पारिवारिक सम्बन्ध स्नेह पर टिके हुए हैं। स्नेह का भाव मृदुता से बना रहता है और कटुता से नरूट हो जाता है। ये बातें बच्चों के मन में दृढ़ कर देनी चाहिए।

- ✧ बच्चों को सादगी एवं स्वावलम्बन का जीवन जीने के लिए प्रेरित करना चाहिए।
- ✧ मन में जो विचार आए वैसा करते जाना मन की गुलामी हैं और मन में उठे विचारों पर चिन्तन कर उसे अपनाना मन का मालिक बनना है। वह मालिक बनना चाहता है यह गुलाम- उसे यह बताकर निर्णय करना उस पर छोड़ दें।
- ✧ ध्यान, मौन आदि का भी उसके जीवन में स्थान हो ताकि वह अपने मन को साधना और संयमित करना सीख सकें।
- ✧ परिवार, समाज, देश और विश्व में एक व्यक्ति की क्या भूमिका है, इस सम्बन्ध में भी माता-पिता या अध्यापक बच्चों का मार्गदर्शन करे।
- ✧ शास्त्र या आगम की कुछ सूक्तियाँ बच्चों को प्रतिदिन सुनाएँ और उनका अर्थ बताते हुए जीवन के साथ जोड़कर समझाने का प्रयास करना चाहिए।
- ✧ छोटे-छोटे नियम ग्रहण कर उनको दृढ़ता से पालन करना सिखाएँ। ताकि बड़े होकर वह छोटी-छोटी बातों पर फिलसलेगा नहीं।
- ✧ कामयाबी ही सबकुछ है- ऐसी मानसिकता बच्चों की नहीं बने, इसका ध्यान रखा जाना चाहिए अन्यथा वह तिकड़म लगाकर कामयाब होने की कोशिश करेगा।
- ✧ कुछ चीजों की कीमत होती है और कुछ अमूल्य। यह समझ विकसित होने पर बच्चा ईमानदारी, प्रेम, त्याग का महत्त्व

समझेगा, उसकी अमूल्यता का भी ख्याल रखेगा।

- ✧ बच्चे के ऊटपटांग या गलत शब्दों का प्रयोग करने पर हँसे नहीं, अन्यथा वह अपने आपको चतुर समझने लगेगा।

  कहानी-किस्सों के माध्यम से नैतिकता का पाठ बच्चों को बढ़ाएँ।
- ✧ सही दिशा का ज्ञान कराए बिना बच्चों को चुनाव करने की आजादी नहीं देनी चाहिए।
- ✧ खाने, पीने और ऐशो आराम की सारी शारीरिक जरूरतों को आप तुरन्त पूरा कर देंगे तो चीजें नहीं मिलने पर वे हताश हो जायेंगे।
- ✧ बच्चों की गलतियों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए, उसे सही तरीके से बताकर सुधरवाना चाहिए। आजकल कई माता-पिता उनके मन में कुण्ठा न हो जाए- इस भय से उनकी गलतियों को नजर अन्दाज कर देते हैं। उसका परिणाम यह होगा कि गलत काम करते हुए पकड़े जाने पर वह यह मानेगा कि समाज उसके खिलाफ है।
- ✧ उसके आस-पास बिखरी हुई हर चीज जैसे कि किताबें, जूते, कपड़े वगैरह यदि आप खुद उठायेंगे। उसका हर काम खुद करेंगे तो नतीजा यह होगा कि उसे अपनी सारी जिम्मेदारियाँ दूसरों के कन्धों पर डालने की आदत हो जाएगी।
- ✧ उसे स्व- अनुशासन में रहने की शिक्षा देनी चाहिए। बड़े होने पर अध्ययन एवं नौकरी करने के लिए आजकल बच्चे

माता-पिता से कई सालों तक दूर रहते हैं, यदि पर-अनुशासन की आदत में जीएंगे तो बुरी संगति में जाने में अधिक समय नहीं लगेगा।

- ✧ कोई भी समस्या उसके जीवन में आए तो आप जल्दी से उसका समाधान कीजिए। उसे स्वयं को सोचने का मौका दीजिए और अपने तरीके से समस्या सुलझाने का मदद कीजिए।
- ✧ बच्चों का मनोबल कमजोर हो तो उनसे छोटे-छोटे काम करवाएँ, उन कामों में सफलता मिलने पर उनका आत्मविश्वास जग जाएगा। उसके बाद उसे बड़ी जिम्मेदारी देकर उनका आत्मविश्वास बढ़ा सकते हैं।
- ✧ बच्चों को अनुशासन में रखने के लिए उनके साथ कठोर व्यवहार और सख्ती भी होनी चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर उनको प्रेम और दुलार भी दिया जाना चाहिए। प्रेम और अनुशासन के माहौल में पले बच्चे होकर माता-पिता को अधिक इज्जत देते हैं। विद्वान लेखक जे. एडगर डूवर इस सम्बन्ध में कहते हैं - हर घर में अगर अनुशासन का पालन किया जाए तो युवाओं द्वारा किए जाने वाले अपराधें में 95 प्रतिशत तक की कमी जा जाएगी।
- ✧ माता-पिता को अपने बच्चों पर इस तरह के लेबल नहीं लगाना चाहिए-

  तुम भोंदू हो, उल्ले हो।

  तुम कोई भी काम सही ढंग से नहीं करते।

तुम जिन्दगी में कुछ नहीं कर पाओगे।

- ✧ बच्चों में हिम्मत पैदा करनी हो तो उसे ऐसे लोगों की जीवनी सुनानी चाहिए और पढ़ानी चाहिए, जिन्होंने निराशा को आशा में, नुकसान को फायदे में, रास्ते के पत्थरों को सफलता की सीढ़ी में बदल दिया हो। ऐसे लोग मायूसियों और नाकामयाबियों को अपने ऊपर हावी नहीं होने देते।
- ✧ बच्चों में धैर्य का अभाव उसके जीवन में बड़ी बाधा बन सकता है। मशीनी युग में सभी कार्य बड़ी तीव्रता के साथ सम्पादित होते है, इसलिए भी कोई कार्य धीरे होने पर उन्हें सुहाता नहीं है। इसलिए उनसे ऐसे काम करवाए जाने चाहिए जो धीरे-धीरे समय के साथ समपादित हो। जैसे-पौधे लगाने का काम, चित्रकला आदि कार्य।
- ✧ माता-पिता को बच्चों की प्रकृति, हाव-भाव, मन की बातें, शरारतों के कारण को समझने के लिए बालमनोविज्ञान का शिक्षण अवश्यक लेना चाहिए, ताकि वे कारणों को समझकर उचित समाधान कर सकें।

अपरिग्रह बनाता बच्चों को संतोषी

माता-पिता अपरिग्रह के सिद्धान्त को अपनाते हैं तो इससे बच्चे संतोषी बनते हैं। जो माता-पिता परिग्रही अर्थात् ममत्व बुद्धि से कार्य करते हैं तो उनसे बच्चे वैसा ही सीखते हैं। अपनी वस्तुओं के प्रति अत्यधिक ममत्व बुद्धि बालक को झगड़ालू, खुदगज बना देती है। बहुत उपहार मिलते हैं। अतः माता-पिता को चाहिए कि वे बच्चे को अपने खिलौने दूसरे बच्चों के साथ शेयर करना

सिखाएँ। चाकलेट, बिस्किट, भोजन आदि भी वह संविभाग कर खायें। उसकी हर इच्छा पूरी नहीं करें, चाहे आपके पास कितना भी धन क्यों न हो। इच्छाएँ वे ही पूरी की जानी चाहिए, जो जरूरी हों, अन्यथा इच्छाएँ तो आकाश के समान अनन्त हैं। उसे संतोष करना सिखाना आवश्यक है। टी.वी. के विज्ञापनों से, अपने दोस्तों या रिश्तेदारों के पास देखी हुई चीजों से बच्चों में इच्छाएँ बढ़ रही है। वे अपनी जिद्द से माता-पिता को मांग पूरी करने के लिए विवश कर देते हैं। अपरिग्रह का पाठ यही से बच्चों को पढ़ाना प्रारम्भ कर देना चाहिए। गैर जरूरी चीजों के लिए आप सख्ती से मना कर सकते हैं। इस व्यवहार से उसे शिक्षा मिलेगी कि हर चाही चीज नहीं मिलती है। भविष्य में न मिलने पर वह दुःखी नहीं होगा। धनी माता-पिता के लिए यह बहुत आवश्यक है कि वे अपने बच्चों को अधिक पैसा न दें और उनके भविष्य को सुरक्षित रखें।

कर्मसिद्धान्त से भाव-नियमन

कर्मसिद्धान्त को समझकर बच्चों के साथ उनके अनुरूप व्यवहार करें तो उनका लालन-पालन सरल हो जाता है। कुछ बच्चों में क्रोध तो कुछ में अहं तो कुछ में लोभ प्रवृत्ति की बहुलता होती है। ऐसी स्थिति में माता-पिता बच्चों की इन भावनाओं को ध्यान से देखकर निर्णय करें कि उसमें कस भावना की बहुलता है। यदि क्रोध की अधिकता है तो ऐसी कथाएँ निर्णय करें कि उसमें किस भावना की बहुलता है। यदि क्रोध की अधिकता है तो ऐसी कथाएँ जो क्रोध का दुष्परिणाम बताती है, उन्हें सुनाएँ। अहंकार और लोभ की अधिकता होने पर मान-लोभ के दुष्परिणामों को बताने वाली कथा सुनाएँ। अधिक आयु के बालकों को कर्मसिद्धान्त भी समझाया जा सकता है।

परस्परोपग्रहो जीवानाम् का बोध करता है सन्तुलित विकास में सहयोग

यदि हम परस्परोपग्रहो जीवानाम् सिद्धान्त को समझते हैं तो बच्चों में सहयोग की भावना पैदा होती है। समाज की संरचना का आधारभूत सिद्धान्त है - परस्परोपग्रहो जीवानाम् समाज में व्यक्ति परस्पर उपग्रह करते हुए जीता है। जिस प्रकार हमारे शरीर के अंग परस्पर समन्वय से कार्य करते हैं, एक के बीमार होने पर दूसरा बीमार होने लगता है, वैसे ही समाज विभिन्न अंगोपांगो का समुदाय है। बच्चों को यह आभास करवाना आवश्यक है कि सह समाज का एक हिस्सा है और उसकी समाज के प्रति भी जिम्मेदारी है। अतः माता-पिता अपने बच्चों को समाज का हिस्सा मानकर पाले तो उनका बच्चों के प्रति मोह का भाव नहीं रहता है अपितु कर्त्तव्य का भाव रहता है। यह कर्त्तव्य का भाव उन्हें बच्चे के सर्वांगीण और संतुलित विकास के लिए प्रेरित करता है। वे शारीरिक विकास के अतिरिक्त बच्चे के बौद्धिक, भावात्मक सामाजिक और आध्यात्मिक विकास की ओर भी ध्यान देते हैं।

इस तरह जैन सिद्धान्तों को व्यावहारिक स्वरूप में ढालने से बच्चों के लालन-पालन में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने का मार्ग प्रशस्त होता है।

JAIN BHAWAN PUBLICATIONS

P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007

English :

1. *Bhagavatī-Sūtra* - Text edited with English translation by K.C. Lalwani in 4 volumes ;
   - Vol - I (*śatakas 1 - 2*) Price : Rs. 150.00
   - Vol - II (*śatakas 3 - 6*) 150.00
   - Vol - III (*śatakas 7 - 8*) 150.00
   - Vol - IV (*śatakas 9 - 11*) ISBN : 978-81-922334-0-6 150.00
2. James Burges - *The Temples of Śatruñjaya,* 1977, pp. x+82 with 45 plates Price : Rs. 100.00 [It is the glorification of the sacred mountain *Śatruñjaya.*]
3. P.C. Samsukha -- *Essence of Jainism* ISBN : 978-81-922334-4-4 translated by Ganesh Lalwani, Price : Rs. 15.00
4. Ganesh Lalwani - *Thus Sayeth Our Lord,* Price : Rs. 50.00 ISBN : 978-81-922334-7-5
5. *Verses from Cidananda* translated by Ganesh Lalwani Price : Rs. 15.00
6. Ganesh Lalwani - *Jainthology* ISBN : 978-81-922334-2-0 Price : Rs. 100.00
7. G. Lalwani and S. R. Banerjee- *Weber's Sacred Literature of the Jains* ISBN : 978-81-922334-3-7 Price : Rs. 100.00
8. Prof. S. R. Banerjee - *Jainism in Different States of India* ISBN : 978-81-922334-5-1 Price : Rs. 100.00
9. Prof. S. R. Banerjee - *Introducing Jainism* Price : Rs. 30.00 ISBN : 978-81-922334-6-8
10. K.C.Lalwani - *Sraman Bhagwan Mahavira* Price : Rs. 25.00
11. Smt. Lata Bothra - *The Harmony Within* Price : Rs. 100.00
12. Smt. Lata Bothra - *From Vardhamana to Mahavira* Price : Rs. 100.00
13. Smt. Lata Bothra- *An Image of Antiquity* Price : Rs. 100.00

Hindi :

1. Ganesh Lalwani - *Atimukta* (2nd edn) ISBN : 978-81-922334-1-3 translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 40.00
2. Ganesh Lalwani - *Śraman Samskriti ki Kavita,* translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 20.00
3. Ganesh Lalwani - *Nīlāñjanā* translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 30.00
4. Ganesh Lalwani - *Candana-Mūrti,,* translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 50.00
5. Ganesh Lalwani - *Vardhamān Mahāvīr* Price : Rs. 60.00
6. Ganesh Lalwani - *Barsat kī Ek Rāt,* Price : Rs. 45.00
7. Ganesh Lalwani - *Pañcadasī* Price : Rs. 100.00
8. Rajkumari Begani - *Yado ke Aine me,* Price : Rs. 30.00
9. Prof. S. R. Banerjee - *Prakrit Vyākaraṇa Praveśikā* Price : Rs. 20.00
10. Smt. Lata Bothra - *Bhagavan Mahavira Aur Prajatantra* Price : Rs. 15.00
11. Smt. Lata Bothra - *Sanskriti Ka Adi Shrot, Jain Dharm* Price : Rs. 20.00
12. Smt. Lata Bothra - *Vardhamana Kaise Bane Mahāvir* Price : Rs. 15.00
13. Smt. Lata Bothra - *Kesar Kyari Me Mahakta Jain Darshan* Price : Rs. 10.00
14. Smt. Lata Bothra - *Bharat me Jain Dharma* Price : Rs. 100.00
15. Smt. Lata Bothra - *Aadinath Risabdav Aur Austapad* Price : Rs. 250.00 ISBN : 978-81-922334-8-2
16. Smt. Lata Bothra - *Austapad Yatra* Price : Rs. 50.00
17. Smt. Lata Bothra - *Aatm Darsan* Price : Rs. 50.00
18. Smt. Lata Bothra - *Varanbhumi Bengal* Price : Rs. 50.00 ISBN : 978-81-922334-9-9

Bengali:

1. Ganesh Lalwani - *Atimukta* Price : Rs. 40.00
2. Ganesh Lalwani - *Śraman Sanskritir Kavitā* Price : Rs. 20.00
3. Puran Chand Shymsukha - *Bhagavān Mahāvīra O Jaina Dharma.* Price : Rs. 15.00
4. Prof. Satya Ranjan Banerjee- *Praśnottare Jaina Dharma* Price : Rs. 20.00
5. Prof. Satya Ranjan Banerjee- *Mahāvīr Kathāmrita* Price : Rs. 20.00
6. Dr. Jagat Ram Bhattacharya- *Daśavaikālika sūtra* Price : Rs. 25.00
7. Sri Yudhisthir Majhi- *Sarāk Sanskriti O Puruliar Purākirti* Price : Rs. 20.00
8. Dr. Abhijit Battacharya - *Aatmjayee* Price : Rs 20.00
9. Dr Anupam Jash - *Acaryya Umasvati'r Tattvartha Sutra* (in press) ISBN : 978-93-83621-00-2

Journals on Jainism :

1. *Jain Journal* (ISSN : 0021 4043) A Peer Reviewed Research Quarterly
2. *Titthayara* (ISSN : 2277 7865) A Peer Reviewed Research Monthly
3. *Sraman* (ISSN : 0975 8550) A Peer Reviewed Research Monthly